www.thearyasamaj.org

।। ओ३म् ।।

वैदिक ज्योति

वर्ष 18 अगस्त 2013

आर्य सेवा संघ, महू

स्वाधीनता दिवस अमर रहे !

www.thearyasamaj.org

धर्म और राष्ट्र

– प्रकाश आर्य, महू

सामान्यतः आज धर्म और राष्ट्र दो पृथक–पृथक बातें मानी जाती है। यहां तक कि राष्ट्र धर्म निरपेक्ष होना चाहिए तभी देश में शान्ति, संगठन, समृद्धि हो सकती है। कुल मिलाकर धर्म को राष्ट्र से नहीं जोड़ा जाना चाहिए यह प्रचार चल रहा है।

परन्तु यह विचार यथार्तता से भिन्न है, ठीक नहीं है। हमारे जितने भी धर्म ग्रंथ हैं जिन्हें हम धार्मिक मानते हैं उन सबमें राष्ट्र व राजनीति को धर्म के अन्तर्गत ही बताया गया।

धर्म का पालन चार प्रकार के कर्तव्यों (धर्म) को पूरा करने से होता है। ये चार कर्तव्य हैं जिन्हें हम 4 धर्म कह सकते हैं वे हैं :–

1. व्यक्तिगत धर्म 2. पारीवारिक धर्म 3. सामाजिक धर्म 4. राष्ट्रीय धर्म

अपने जीवन में उपरोक्त चारों कर्तव्यों को जो व्यक्ति पूरा नहीं करता वह पूर्ण धार्मिक है ही नहीं, यह मानना चाहिए। संसार में प्राचीनतम धर्म ग्रंथ वेद हैं जो सनातन संस्कृति के आधार है तथा ईश्वरीय ज्ञान होने से पूर्ण हैं वे किसी भी जाति, सम्प्रदाय, देश के बन्धन से बाहर हैं उनमें अनेकों स्थान पर मातृभूमि अथवा राष्ट्र के लिए मनुष्य को उपदेश दिया है।

मातृभूमि के संबंध में वेद में बताया **"माताभूमि पुत्रोऽहं पृथिव्याः"** ये भूमि मेरी माता मैं इसका पुत्र हूँ।

इतना ही नहीं पुनः वेद का सन्देश है – **"वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम्"**

हम सब मार्तभूमि के लिए बलिदानी हों।

हमारे पुरोहित भी राष्ट्रीय चेतना वाले हों, इसलिए कहा – **वयं राष्ट्रे जाग्रयाम पुरोहितः**

हमारे महान धार्मिक एवं आदर्श भगवान राम ने जन्म भूमि की तुलना स्वर्ग से भी बढ़कर बताई है। "जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरियसी"

वेद में हमारा राष्ट्र कैसा हो इस बात की प्रार्थना परमात्मा से करते हुए बताया गया –

ओ3म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणों ब्रह्मवर्चसी जायताम् आ राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथी जायतां दोग्धीः धेनुर्वोढाऽनड्वानशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठा सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरा जायतां निकामें–निकामें नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न औषधयः

www.thearyasamaj.org

पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्।।

इसका हिन्दी अर्थ कुछ ऐसा है –

ब्रह्मन स्वराष्ट्र में हों, द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हों, अरिदल विनाशकारी।।
होवें दुधारू गौएं, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुभग सदा ही।।
बलवान सभ्य योद्धा, यजमान पुत्र होवे।
इच्छानुसार वर्षे, पर्जन्य ताप धोवे।।
फल–फूल से लदी हों, औषध अमोघ सारी।
हो योग–क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी।।

इसलिए धर्म को राष्ट्र से पृथक नहीं किया जा सकता है। राष्ट्रीयता धर्म का ही एक हिस्सा है। धर्म का अर्थ कर्तव्य परायणता भी होता है। जिस देश के नागरिक धर्मानुकरण करेगें, वहां नैतिकता, कर्तव्य परायणता पायी जावेगी। जहां धर्म को राष्ट्रीयता के साथ ही जोड़ा जावेगा वहीं संगठन, शान्ति, समृद्धता पायी जावेगी। धर्म राष्ट्र विरोधी गतिविधियों पर अंकुश लगाकर राष्ट्रीयता के भाव उत्पन्न करने वाला है।

दुर्भाग्य से आज समाज में धर्म के अर्थ को संकुचित कर उसे मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारा, गिरिजाघर तक सीमित कर दिया है। धर्म का स्थान सम्प्रदाय, मजहबों ने प्राप्त कर लिया है। इतिहास की पुस्तेकें धार्मिक पुस्तकें बन गई हैं।

इन सबका परिणाम वर्तमान समय में फैल रही अराजकता, अव्यवस्था, अनिश्चितता, अमानुषता है।

भगवान राम, भगवान कृष्ण, महात्मा मनु आचार्य चाणक्य को यदि पढ़े व समझें तो धर्म व राष्ट्र के गूढ संबधों को समझा जा सकता है। धर्मानुकरण ही किसी राष्ट्र के लिए वरदान और धर्म का पलायन ही राष्ट्र का अभिशाप बनेगा, इस बात को स्वीकार करना चाहिए।

जिस प्रकार कहा **"धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षितः"** हमने धर्म की रक्षा की तो धर्म हमारी रक्षा करेगा और हमने धर्म को मार दिया तो धर्म हमें मार देगा। धर्म हमारा कवच है धर्म हमारा मार्गदर्शक, प्रदर्शक, सत्यज्ञान दाता, कर्तव्य व अधिकारों का बोध कराने वाला यन्त्र है इसलिए राष्ट्र रक्षा, राष्ट्र की उन्नति, राष्ट्रीय भावना के प्रति हमें अग्रसर होकर राष्ट्रीय धर्म का पालन करना है यही हमारे धार्मिक होने का प्रमाण है। यही हमारे धार्मिक होने का प्रमाण है।

www.thearyasamaj.org

बोधकथा

बन्धन छोड़े बिना सफर नहीं

एक बार गंगा किनारे रहने वाले कुछ नवयुवकों ने रात्रि नौका विहार का कार्यक्रम बनाया। निश्चित समय पर सभी साथी गंगा घाट पर आ गए। रात्रि में मनोरंजन के लिए गीत संगीत का भी आयोजन किया गया था। खाने पीने की सारी व्यवस्था कर ली थी।

रात्रि भर पूर्णिमा की रात्रि का आनन्द आज इस नौका विहार में लेगें, इस भावना से सभी साथी नाव में सवार हो गए।

रात्रि का मजा और अधिक आवे इसलिए मस्ती के लिए सभी ने भांग का भी सेवन किया हुआ था।

नाव में बैठने के कुछ समय बाद गाना बजाना चालू हो गया, चप्पू चलाना चालू हो गया, रातभर ढ़ोल मंजीरे, गीत गाने, भजन, खाना–पीना चलता रहा। नाव का चप्पू चलाने वाले की अपनी धुन में चप्पू चलाते रहे थे। ऐसा करते–करते सुबह हो गई, भांग का नशा भी उतर चुका था। सभी यह देखकर चौक उठे कि नाव तो रात्रि में जिस स्थान पर खड़ी थी आगे नहीं बढ़ी। रातभर चप्पू चलाने पर भी कोई अर्थ नहीं निकला। देखा तो सिर पकड़ लिया। जिस रस्सी से नाव बंधी थी उसे तो खोलना ही भूल गए रातभर चप्पू चलाया भी तो क्या ?

यही स्थिति आज के मानव की होती जा रही है अर्थ और काम (भोग विलास) के नशे में धुत होकर वह सफर करना चाह रहा है जिससे दुर्घटना होना संभव है।

राग, द्वेष, ईर्ष्या, मान, लड़ाई के बन्धनों से बंधा हुआ यह सफर करना चाहता है, उसे हेतु परिश्रम भी करने का प्रयास कर रहा है।

परन्तु सारा प्रयास व्यर्थ जावेगा, जब तक जीवन से ये बन्धन नहीं छोड़ता तब तक सफर तय नहीं हो सकता।

www.thearyasamaj.org

बड़ा कौन ?

— प्रकाश आर्य, महू

सामान्यतः हम बड़ा उसे मानते हैं जो आयु में बड़ा हो, रिष्ते में बड़ा हो, धनवान हो या किसी बड़े पद पर बैठा हो। इसके अतिरिक्त प्रायः अन्य किसी को बड़ा नहीं मानते है।

इसके अतिरिक्त बड़ा कौन–कौन हो सकता है इसकी जानकारी नहीं होने से उस पर कभी विचार ही नहीं किया ? जब विचार ही नहीं किया तो उन्हें बड़ा मानने का, उन्हें सम्मान देने का कभी सोचा ही नहीं ?

इस कारण समाज के वे तमाम व्यक्ति जो बड़े हैं, सम्मान पाने के अधिकारी हैं, वे उपेक्षित हो रहे हैं।

देखा जावे तो यह समाज की बहुत बड़ी क्षति है जहां योग्य व्यक्तियों को अनदेखा किया जा रहा है। इसलिए बड़ा कौन हो सकता, सम्मान के योग्य कौन–कौन है, इसका संक्षिप्त विचार यहां किया जा रहा है।

सबसे पहले बड़े मनुष्य की पहचान केवल आयु, रिष्ते, धन या पद तक ही हम ना सोचें, इसके आगे भी हमारे शास्त्रों ने, समाज शास्त्र प्रणेता विद्वानों ने जो बताया उन्हें भी मान्यता देनी चाहिए।

सबसे पहले तो मानवीय बड़प्पन का श्रेष्ठ गुण है हमारा व्यवहार। व्यवहार में यह महत्वपूर्ण नहीं है कि किसी बड़े (आयु, धन, पद से बड़े) व्यक्ति से हम कैसे मिलते हैं, बड़प्पन के लिए यह जरूरी है कि हम छोटे व्यक्ति (अपनी आयु से छोटे, निर्धन व बिना पद पर आसीन व्यक्ति) से कैसे मिलते हैं।

बड़े से षिष्टतापूर्वक विनम्रता पूर्वक, उसको प्रसन्न करने के लिए तो प्रायः स्वार्थ, भय के कारण भी मिलते हैं और कई बार सामाजिक व व्यवहारिक औपचारिकताओं के कारण भी किसी को बड़ा मानते हुए कभी–कभी आपकी अर्न्तआत्मा के विरूद्ध बड़ा मानना पड़ता है। ऐसे मिलने में कोई बड़प्पन नहीं।

किन्तु जब कोई अपने से छोटे व्यक्ति से बड़े प्यार से, सम्मान से, सहजता से, मित्र भाव से मिलता है तो ऐसा मिलना बड़प्पन की निषानी है। इसीलिए कहा गया –

दीन सबन को लखत है, दीनहि लखे न कोय।
जो दीनहि लखत है सो दीनबन्धु सम होय।।

www.thearyasamaj.org

अर्थात् दीन, गरीब, अभावग्रस्त व्यक्ति सबकी ओर आषा भरी दृष्टि से याचक बनकर देखता है। परन्तु उसकी ओर कोई नहीं देखता है। किन्तु जो उस दीन की ओर देखता है, उसकी पीड़ा सुनता है, उसको सांत्वना देता है, उससे मित्रवत् व्यवहार करता है वह तो भगवान के समान होता है।

बड़प्पन की यह भी एक निषानी है, बड़ा वही बन सकता है जो दूसरों को बड़ा देखना चाहता है जो दूसरों को छोटा बनने की कामना करता है वह कभी बड़ा बन ही नहीं सकता। ऐसा बड़ा व्यक्ति झूठा ऊपरी मान–सम्मान तो प्राप्त कर सकता है जो उसके पद, पैसे या भय के कारण है किन्तु वह यष, कीर्ति जो बड़प्पन का सही मापदण्ड है उससे बहुत दूर रह जाता है।

बड़े को वृद्ध कहा जाता है, वृद्ध शब्द आयु में बड़ी उम्र के लिए प्रायः उपयोग होता है। किन्तु नीतिकार विद्वान बड़े की परिभाषा कुछ ऐसी करते हैं।

धनवृद्धा वयोवृद्धा विद्यावृद्धस्तथैवंच।
जातिवृद्धाश्रमवृद्धा ज्ञानवृद्धस्त किंकरा।।

अर्थात – जो धनवान है वह धन की दृष्टि से, जो आयु में बड़ा है वह आयु की दृष्टि से, जो विद्यावान है, विद्या में पारंगत है वह विद्या की दृष्टि से, जो जाति में बड़ा स्थापित है कुटुम्ब या मुखिया, वह उस दृष्टि से और जो आश्रम व्यवस्था में बड़ा है आश्रम वृद्ध है वह इस कारण से और जो ज्ञानवान है, विद्वान है वह ज्ञान की दृष्टि से वृद्ध अथवा बड़ा है। यह सभी बड़े होने का मापदण्ड है। वास्तव में बड़ा होने पर किसी को सहारा, सहयोग, आश्रय जो नहीं देता वह भले ही बहुत पैसे वाला हो, बड़ा विद्वान हो, बड़े पद पर हो, वह बड़ा नहीं। उसकी स्थिति ऐसी है –

बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड खजूर।
पंछी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर।।

इसलिए, विद्यावान, ज्ञानवान, आयु से बड़े इन सबको बड़ा मानकर यथायोग्य सम्मान देना चाहिए। केवल पद पैसा और आयु को ही बड़ा न मानते हुए उन्हें ही सबकुछ न समझें।

www.thearyasamaj.org

मनुष्य के लिए ईश्वर का सर्वोत्तम उपहार "गाय"

1. गौमूत्र उत्तम औषधि है। आयुर्वेद के ग्रंथों में पचास से भी अधिक रोगों में इनका उपयोग किया जाता है।

2. कृषि के कार्यों के लिए गाय के बछड़े सर्वोत्तम हैं। भारतवर्ष में आज के मशीनी युग में भी 96 प्रतिशत खेती बैलों से होती है।

3. गाय एक सहनशील पशु है। वह कड़ी धूप व सर्दी को भी सहन कर लेती है। इसीलिए गाय जंगल में घूमकर प्रसन्न होती है।

4. गाय के दूध में सूरज की किरणों से भी नीरोगता बढ़ती है। इसीलिए वह अधिक स्वास्थ्यप्रद है। गाय का दूध स्वर्णयुक्त है।

5. गाय की अपेक्षा भैंस के बच्चे भैंसा धूप में कार्य करने में सक्षम नहीं होते।

6. गाय की अपेक्षा भैंस के घी में कण अधिक होते हैं। जो कि सुपाच्य नहीं होते।

7. गाय का घी सूक्ष्मतम नाड़ियों में प्रवेश करके शक्ति देता है। मस्ष्कि व हृदय की सूक्ष्मतम नाड़ियों में पहुंचकर गोघृत शक्ति प्रदान करता है। आयुर्वेद में गोघृत का ही शारीरिक शोधन में प्रयोग होता है।

– पं. सुरेशचन्द्र शास्त्री
आर्य समाज, महू

थोड़ा हंसिए भी

एकबार संतासिंह को 20 लाख की लॉटरी खुली। संतासिंह पैसे लेने लॉटरी वाले के पास गए। नम्बर मिलाने के बाद लॉटरी वाले ने कहा कि ठीक है सर हम आपको अभी 1 लाख रूपए देगें और बाकी के 19 लाख आप अगले 19 हफ्तों तक ले सकते हैं।

संतासिंह बोले – नहीं मुझे तो अपने पूरे पैसे अभी ही चाहिए नहीं तो आप मेरे 5 रूपए वापस कर दीजिए।

संतासिंह (बंतासिंह से) – तुम्हारी छतरी में तो छेद है।
बंता सिंह – हॉ, पता है और इसे मैंने ही किया है।
संता सिंह – लेकिन क्यों ?

www.thearyasamaj.org

कैसा था मेरा देश

भारत किसी समय विश्वगुरू सोने की चिड़िया के नाम से जाना जाता था। इसके दर्शन के लिए यात्री विदेशों से आते थे। यहां का आध्यात्म, प्राकृतिक छटा, सम्पन्नता और परमात्मा का दिया हुआ ज्ञान वेद इसकी पहचान का प्रमुख कारण था। संसार के तमाम व्यक्ति ज्ञान पिपासू यहां आकर अपनी ज्ञान पिपासा से तृप्त होते थे। कहा गया **"एतद्‌देश प्रसूतस्य शकादग्र जन्मनः। स्वें स्वं चरित्रेण सर्वा पृथिवां मानवाः।** इसी से प्रभावित होकर विदेशी विद्वान मेक्समूलर ने अपने विचार अपनी पुस्तक "इण्डिया बट केन टीच अस" में लिखा –

"'अगर मैं विश्वभर में से उस देश को ढूँढ़ने के लिए चारों दिशाओं में आँखें उठाकर देखूँ जिस पर प्रकृति–देवी ने अपना सम्पूर्ण वैभव, पराक्रम तथा सौन्दर्य खुले हाथों लुटाकर उसे पृथ्वी का स्वर्ग बना दिया है, तो मेरी अंगुली भारत की तरफ उठेगी। अगर मुझसे पूछा जाए कि अन्तरिक्ष के नीचे कौन–सा वह स्थल है जहाँ मानव के मानस ने अपने अन्तराल में निहित ईश्वर–प्रदत्त अन्यतम सद्भावों को पूर्ण रूप से विकसित किया है, गहराई में उतरकर जीवन की कठिनतम समस्याओं पर विचार किया है, उनमें से अनेकों को इस प्रकार सुलझाया है जिसको जानकर प्लेटों तथा कॉटें का अध्ययन करने वाले मनीषी भी आश्चर्य चकित रह जाएँ, तो मेरी अँगुली भारत की तरफ उठेगी और अगर मैं अपने से पूछूँ कि हम यूरोप के वासी – जो अब तक केवल ग्रीक, रोमन तथा यहूदी विचारों में पहले रहे हैं, किस साहित्य से वह प्रेरणा ले सकते हैं जो हमारे भीतरी जीवन का परिशोध करें, उसे उन्नति के पथ पर अग्रसर करें, व्यापक बनाये, विश्वजनीय बनाये, सही अर्थों में मानवीय बनायें, जिससे हमारे इस पार्थिक–जीवन को ही नहीं हमारी सनातन आत्मा को प्रेरणा मिले, तो फिर मेरी अंगुली भारत की तरफ उठेगी।

आज हम कहां हैं – ताज से मोहताज हो गए, फिर भी राष्ट्र के प्रति नहीं सोचते। हर नागरिक जब तक राष्ट्र भक्त नहीं, तब तक देश का पूर्ण उत्थान नहीं।।

www.thearyasamaj.org

श्रावणी उपाकर्म (ऋषि तर्पण) महापर्व

– पं. रामलाल शास्त्री
"विद्याभस्कर", महू

"वेदोऽखिलो धर्ममूलम्" अर्थात् वेद धर्म का मूल है (मनु), सुखस्य मूलं धर्मः (चाणक्य नीति) अर्थात् धर्म सुख का मूल है। आर्य समाज का तीसरा नियम है वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

हमारे पूर्वज नित्य ही वेद पढ़ना–पढ़ाना अपना कर्तव्य समझते थे पर इस पर्व को विशेष रूप से वेद के स्वाध्याय का पर्व मानते थे। वर्षा ऋतु में वेद का उपदेश करने और वैदिक शिक्षकों को प्रचार करने की ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। वेद के स्वाध्याय का उपक्रम अर्थात् प्रारम्भ जिस दिन से विशेष रूप से किया जाता है उसे उपाकर्म कहते है। धर्मशास्त्र प्रणेता मनु इस पर्व के विषय में लिखते है।

श्रावण्यां प्रौष्ठ पद्यां वाऽप्युपाकृत्या यथा विधि।
युक्त 2 छन्दां स्यधीयीत मासान विप्रोऽर्ध पंचमान।।

अर्थात द्विजन्मा ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य लोग श्रावण मास की अथवा भाद्रप की पौर्णमासी को विधि पूर्वक वेदों का स्वाध्याय प्रारंभ करके साढ़े चार मास तक वेदाध्ययन करें, इसी पर्व को वेदों का स्वाध्याय करने के कारण ऋषि तर्पण के नाम से भी उल्लेख मिलता है। इस पर्व के अवसर पर यजमानों, ग्रहस्थों को ऋषियों का सानिध्य मिलता था। संसार के अन्य किसी भी देश में ऐसा कोई पर्व नहीं मनाया जाता जो पठन–पाठन को ही समर्पित हो।

वर्षा के कारण प्रत्येक वर्ग के लोग कामों से निवृत्त होकर बालकों की शिक्षा हेतु ऋषियों, मुनियों, आचार्यों द्वारा संचालित गुरूकुल में जाते थे। गुरूकुलों में प्रवेश श्रावण मास में होता था और श्रावणी उपाकर्म तथा बालकों के विधिवत् उपनयन (जनेऊ) संस्कार के उपरांत अध्ययन अध्यापन का सत्र आरंभ होता था। इस प्रकार स्वाध्याय सत्संग और वृहद यज्ञों का आयोजन निरन्तर चार मास तक चलता था।

www.thearyasamaj.org

पारस्कर गृहयसूत्र में भी ऐसा विधान मिलता है :–

अर्थतोऽध्यायोपाकर्म, औषधीनां प्रादूर्भा वे श्राणेन् श्रावणंमंस पौर्णमास्यां श्रावणस्य पंचमो हस्ते वा।। मानस जीवन में जन्म लेने के पश्चात ऋषि ऋण, पितृ ऋण और देव ऋण स्वतः ही आ जाते हैं। इनमें ऋण रहित होने के लिए तीन उपाय बताये गए है। पितृ ऋण माता–पिता की सेवा करने और सन्तान का उचित पालन करने से और ऋषि ऋण वेद के पढ़ने–पढ़ाने और सुनने सुनाने से उतरता है।

मध्यकाल में श्रावणी उपाकर्म के दिन ब्राह्मण लोग क्षत्रियों एवं अन्य लोगों के हाथों में रक्षा सूत्र बांधते थे लिससे वे रक्षा सूत्र से प्रेरणा लेकर जीवन को वेदानुकूल मर्यादित बनाये। विद्या प्रचार प्रसार के लिए ब्राह्मणों और विद्वानों की रक्षा करें। यज्ञ के समय पुरोहित यजमान के हाथ में सूत्र बांधता है जिसका अभिप्राय यह है कि यजमान यज्ञ की मर्यादा का पालन करें और अपने जीवन को मर्यादित बनायें।

प्राचीन परम्परागत ढ़ंग से श्रावणी पर्व का जो भव्य स्वरूप था वह सब प्रायः लुप्त है कुछ चिन्ह शेष है। विद्यालयों के सत्र अभी भी जुलाई मास से प्रारंभ होते हैं। दक्षिण भारत में जन्म से ब्राह्मण समुदाय में उपाकर्म यज्ञोपवीत परिवर्तन की प्रथा शेष है।

यवनों के शासनकाल में जब जनेऊ बलात तोड़े जाने लगे तब पुरोहितों ने यजमानों को मौली हाथ में बांध उपाकर्म की विधि पूरी कर ली व इसको रक्षा सूत्र कहा जाने लगा। रक्षा बन्धन की परम्परा मुस्लिम युग में प्रचलित हुई है। स्त्रियां अपनी रक्षा के लिए अपने भाईयों अथवा जिन वीर पुरूषों के हाथों में रक्षा सूत्र बांधती थी वे वीर पुरूष अपने प्राणों को न्यौछावर करके भी अपनी बहनों की रक्षा करना धर्म मानते थे।

भारत के इतिहास में ऐसी भी घटनाएं घटी है कि यदि बहनों ने विधर्मियों को भी भाई मानकर रक्षा सूत्र बांध दिया था किसी के हाथ भिजवा दिया तो उन्होंने भी रक्षा सूत्र, की प्रतिष्ठा को गिरने नहीं दिया। राणा सांगा की विधवा पत्नि

www.thearyasamaj.org

चित्तौड़ की महारानी कर्मवती ने गुजरात के बादशाह से अपनी रक्षा के लिए हुमायूं के पास राखियॉ भेजी थी और वीर हुमायूं ने मुसलमान होते हुए भी तुरन्त चित्तौड़ पहुंचकर कर्मवती महारानी की रक्षा की जो इतिहास की ऐसी घटनाओं के आधार से ही बहिनें, भाईयों के हाथों में राखी बांधने लगी, श्रावणी ने राखी का रूप ले लिया अर्थप्रधान इस युग में आज रक्षा सूत्र (राखी) थी। बहिनों के प्रति भाईयों ने रक्षा करने में अपना कर्तव्य समझता था, परन्तु उसकी रक्षा कर्तव्य के स्थान केवल रूपया और द्रव्य ने ले लिया है जिसे प्राप्त कर बहिनें भी प्रसन्न हो जाती है और भाई भी अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ इस पवित्र दायित्व से मुक्त हो जाते है।

वर्षाकालीन इस परम पवित्र पर्व से प्रेरणा ले कि बड़ी श्रद्धा से यह श्रावणी पर्व विधि पूर्वक प्रत्येक घर में मनाया जाए, पुराने यज्ञोपवीत के स्थान पर नया यज्ञोपवीत धारण किया जाएं यज्ञोपवीत की महत्ता को समझते हुए धारण किया जाए, इस पर्व पर अपने किसी भी दुर्गुण को छोड़ने और कोई सद्गुण या धर्म अथवा शुभ कर्म का अनुष्ठान करने में संबद्ध हो जाए। नित्य प्रति स्वाध्याय का अभ्यास डाला जाए। स्वाध्याय शील बने मनु महाराज अपनी स्मृति के 3/64 में लिखते है कि "स्वाध्याय न अर्चचेत् ऋषिन" अर्थात् स्वाध्याय करने से ऋषियों की पूजा होती है, साक्षतकृत धर्माणऋषय धर्म के साक्षात हष्ट तथा वेद के गूढ़ रहस्य को समझने वाले जिन ऋषियों ने वेद तक पहुंचने के लिए वेदांगों उपयो दर्शन विद्या के शास्त्रों उपवेदों एवं उपनिषदों का ज्ञान मानव को दिया है उनको जानकर वेद मन्त्रों को समझाना ही ऋषियों की पूजा है। जब कभी इस पर्व के प्रति उदासीनता आ जाए तो गीता का यह प्रेरक श्लोक की उक्ति सदैव हृदयांगम कर याद रखें **"स्वाध्यायभ्यसनं चैव वाऽमयं तय उच्चते अतः"** मानव मात्र स्वाध्याय कर वृत अवश्य ले क्योंकि स्वाध्याय के व्रत से बढ़कर और कोई व्रत नहीं हो सकता। अतः इसे अपनाकर श्रावणी के प्राचीन गौरव को पुनः प्रतिष्ठित करें।

www.thearyasamaj.org

आओ 15 अगस्त मनाएं

आओ 15 अगस्त मनाएं, शहीदों के सपनें सजाएं।
संजाएं बापू के अरमान, कल्पना थी बने, देश महान।।
हर साल ये दिवस आता है।
लाल, बाल, पाल, भगत, आजाद, बिस्मिल की याद दिलाता है,
याद आती है वीरांगना लक्ष्मीबाई,याद आता है हर शहीद भाई।

जलिया वाला घाव, फिर हरा हो जाता है।
अंग्रेजों की बर्बरता और सावरकर याद आता है।।

इनके अतीत को हम कहीं भूल न जाएं,
आजादी की कीमत क्या, पीढ़ी को समझाएं।
इसलिए हर साल इसे मनाते हैं,
गीत राष्ट्र भक्ति के गाते हैं।।

हे गौरव यहां जन्म पाने का,
हमें भारतीय कहलाने का।
वैभव, सुख–शान्ति, प्राकृतिक छटा से पूर्ण मेरा देष,
हीमगिरी माला देती सदा सुख सन्देष।

आजादी है सौगात, अनेकों शहीदों की।
भारत मॉ के वीर सपूतों की।।

विश्वास शहीदों का बनाए रखेगें।
प्राण देकर भी हिफाजत इसकी करेगें।।

www.thearyasamaj.org

यह भाव हमें जन–जन तक पहुंचाना होगा।
राष्ट्र धर्म सबसे बड़ा, यह सिखाना होगा।।

सौ जनम लेकर भी, ऋण उनका न चुका पाएंगे।
भले ही कतरा–कतरा लहू का, उनके लिए बहायेंगे।।

फिर देश को पुराना गौरव दिलाएं।
आओ 15 अगस्त मनाएं।।

त्रिलोक में जय–जयकार, उनकी होती है।
जिनके जीवन में राष्ट्र सरिता बहती हैं।।

– प्रकाश आर्य, महू

सभी देशवासियों को स्वतन्त्रता दिवस की हार्दिक बधाई

आर्य समाज, महू
आर्य शिक्षण संस्थान, महू
गायत्री महायज्ञ समिति, महू
आर्य सेवा संघ, महू
पं. राजगुरू शर्मा वैदिक छात्रावास, महू
महर्षि दयानन्द व्यायामशाला, महू

www.thearyasamaj.org

स्वामीजी की देश–भक्ति

1873 ई. की बात है। ऋषि दयानन्द की भेंट उस समय के वायसराय लार्ड नार्थ ब्रुक से कलकत्ते में हुई। वायसराय बोले–"मुझे मालूम हुआ है कि आप दूसरे धर्मों का खण्डन करते हैं जिससे हिन्दू और मुसलमान आपके विरोधी हो गये हैं। क्या आप हमारी सरकार की ओर से अपनी रक्षा का विशेष प्रबन्ध चाहते हैं ?" स्वामीजी ने उत्तर दिया –"मुझे ब्रिटिश राज्य में अपने विचारों का प्रचार करने की पूरी आजादी है और मैं अपने को पूरी तरह सुरक्षित समझता हूँ।" इस पर वायसराय ने कहा – "यदि ऐसा है तो क्या आप अंग्रेजी राज्य की प्रशंसा करेगें और अपना भाषण देने से पहले जो आप थोड़ी देर के लिए प्रार्थना करते हैं, उसमें यह प्रार्थना भी जोड़ देगें कि अंग्रेजी राज्य की छत्र छाया भारत पर सदा बनी रहे। यह सुनकर स्वामी जी बड़ी निडरता से बोले कि मैं आपका यह सुझाव कदापि नहीं मान सकता, क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि मेरे देशवासियों की अपनी उन्नति करने के लिए वा संसार की जातियों में आदर पाने के लिए यह आवश्यक है कि भारत पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त करें। इसलिए मैं हर रोज प्रभु से यह प्रार्थना करता हूं मेरा देश विदेशियों की दासता से जल्दी से जल्दी छुटकारा पाये। तभी लार्ड नार्थ ब्रुक ने इण्डिया आफिस को भेजे गये एक पत्र में स्वामी जी को एक विद्रोही फकीर की उपाधि प्रदान की।

कांग्रेस अभी दूध पीती बच्ची थी। उसका जन्म भी न हुआ था कि स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में "स्वराज्य" शब्द का प्रयोग किया। **कांग्रेस (राष्ट्र महासभा) के संस्थापक ह्यूम ने कहा था, "स्वामी दयानन्द ऐसे महान पुरूष हैं कि मैं उनके बूट के तस्मे खोलने के योग्य भी नहीं हूँ।" श्रीमती ऐनी बेसेन्ट ने लिखा है कि ऋषि दयानन्द सर्वप्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने आधुनिक युग में "भारत भारतियों के लिए" का सिंहनाद किया।**

www.thearyasamaj.org

स्वामीजी ने "आर्याभि विनय" नामक अपनी पुस्तक में भी स्थान–स्थान पर आर्यों के चकवर्ती राज्य वा स्वतन्त्रता आदि की परमात्मा से प्रार्थना की है। इसीलिये उनके राष्ट्र प्रेम, स्वदेश भक्ति महान थी इसमें कोई सन्देह नहीं।

देश के लिए बलिदानी हों।

ये युध्यन्ते प्रधनेषु, शूरासो ये तनूत्यजः।
ये वा सहस्रदक्षिणाः, तांश्चिदेवापि गच्छतात्।।

हिन्दी अर्थ – हे वीरो ! जो शूरवीर संग्रामों में युद्ध करते हैं, जो युद्धों में अपने प्राण दे देते है, अथवा जो यज्ञों में सहस्त्रों रूपए दान देते हैं, उनके पास तुम जाओ।

इस मंत्र में वीरों का गुणगान किया गया है। वे वीर दो प्रकार के हैं – रणवीर और दानवीर। देश के लिए दोनों प्रकार के वीरों की आवश्यकता है।

रणवीर या युद्धवीर वे हैं, जो देश की सुरक्षा के लिए अपने प्राणों की चिन्ता न करके युद्धों में जाते हैं, शत्रुओं से संघर्ष करते हैं, शत्रुओं का अस्तित्व समाप्त करते हैं या स्वयं अपने प्राणों की आहूति देते हैं। ये हैं वे वीर, जो किसी राष्ट्र का सिर ऊँचा उठाते हैं। ये वीर धन्य हैं, और इनको जन्म देने वाली माताएँ भी धन्य हैं। मन्त्र का कथन है कि ऐसे वीरों का अनुकरण करें।

दूसरे प्रकरण के वीर दानवीर हैं। देश की आवश्यकता के समक्ष ये मुक्तहस्त से धन का दान करते है। यदि समाज का क्षत्रिय वर्ग अपने प्राणों की आहूति देकर समाज और देश की रक्षा करता है तो वैश्यवर्ग धन का दान करें, देश रक्षा के पवित्र कार्य में महत्वपूर्ण योगदान करता है। मन्त्र में ऐसे दानवीरों को "सहस्त्रदक्षिणा" कहा है। ये आवश्यकतानुसार हजारों और लाखों की संपत्ति देश रक्षा के लिए देते हैं। भामाषाह इसका एक उदाहरण हैं।

ये दोनों प्रकार के वीर समाज और राष्ट्र के लिए आदर्श और अनुकरणीय हैं।

www.thearyasamaj.org

मनुष्य कौन ?

(महर्षि दयानन्द के शब्दों में)

मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख–दुःख और लाभ हानि को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और महात्मा (न्यायकारी) निर्बल से भी डरता रहे।

इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्वे सामर्थ्य से धर्मात्माओं (सदाचारियों) का चाहे वे अनाथ, निर्बल और गुण रहित (विद्या रहित) क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति, प्रियाचरण और अधर्मी (दुराचारी) चक्रवती सनाथ, महाबलवान् और गुणवान (विद्वान) भी हों, तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करें जहॉ तक हो सके वहॉ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सदा किया करें। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारूण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही चले जाएं, परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक कभी न होवें।

जितने मनुष्य से भिन्न जातिस्थ प्राणी हैं उनमें दो प्रकार का स्वभाव है, बलवान से डरना, निर्बलों को डराना और पीड़ा करना अर्थात् दूसरों का प्राण तक निकाल के अपना मतलब साध लेना देखने में आता है। जो मनुष्य ऐसा ही स्वभाव रखता है उसको भी इन्हीं जातियों में गिनना उचित है। परन्तु जो निर्बलों पर दया, उनका उपकार और निर्बलों पर पीड़ा देने वाले अधर्मी बलवानों के किंचितमात्र भी भय, शंका न करके इनको पर पीड़ा से हटा के निर्बलों की रक्षा, तन, मन और धन से सदा करना, वही मनुष्य जाति का निज गुण है।

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

– महर्षि दयानन्द

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे.....

एक चिन्तन

सुख से दूरी क्यों ?

प्रकाश आर्य, महू

प्रिय पाठकवृन्द,

आपने सुख से दूरी के कारणा में अभी तक अविद्या, अस्मिता, राग के संबंध में पढ़ा चौथा कारण द्वेष है। इस संबंध में पढ़िए – **द्वेष**

द्वेष कटुता, वैमनस्यता, मनुष्य की दूरियां बढ़ाने का सबसे बड़ा कारण हैं। यह द्वेषता मनुष्य का नहीं पशु का लक्षण हैं, अथर्ववेद के एक मन्त्र में द्वेष भेड़िये और स्वजाति द्वेषी कुत्ते का लक्षण बताया गया है। मन्त्र में इन पशुओं के लक्षणों से दूर रहने को कहा गया है, ये जीवन की बुराईयां हैं। ये ही आदतें क्लेष का कारण हैं।

द्वेष रखने वाला मनुष्य रात दिन अपने आप में घुटता रहता है किसी की उन्नति पर दुःखी होता है और किसी के दुःख में हर्ष का अनुभव करता है। यह मनुष्यता का लक्षण नहीं हैं तथा सुख से दूर रखने का सबसे बड़ा कारण है।

क्योंकि मैत्री भाव सुख पहुंचाते हैं। यजुर्वेद के मन्त्र में कहा गया – **दृते दृUहं मा मित्रस्य मा चक्षुषां सर्वाणि भूतानि समींक्षन्ताम्।**

मित्रस्याहं चक्षुषां सर्वाणि भूतानि समीक्षे।

मित्रस्य चक्षुषा समीक्षा महे।। यजुर्वेद 36/18

अर्थ – हे अविद्या अन्धकार निवारक जगदीश्वर दृढ़ता प्रदान कीजिए, मुझे मित्र की ऑख से, मुझे सब प्राणी देखें। मित्र की ऑख से मैं सब प्राणियों को देखूं, मित्र की ऑख से हम सब एक–दूसरे को देखें।

परमात्मा से प्रार्थना करते हैं – हे प्रभो, सभी दिशाएं हमारे लिए हितकर, सुखकारक हों, कोई हमसे द्वेष करने वाला न हो, हम किसी से द्वेष न करें।

www.thearyasamaj.org

और कहा गया – **"सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु"** सभी दिषाएं मेरी मित्र हों। इसी भावना से **"वसुदैव कुटुम्बकम"** का भाव जीवन में सुखकारी होता है।

मित्र भाव से ही सहयोग, संगठन, प्रसन्नता की वृद्धि होती है जो हमें सुख पहुंचाते हैं इसलिए सुखी रहने के लिए द्वेष भाव का त्याग करना जरूरी है।

दृष्टान्त – द्वेष वह अग्नि है जो आपके सुखों को जला देती है। सन्त तुलसीदास व कबीरदास समकालीन सन्त थे। दोनों प्रवचन व कथा करते थे। तुलसीदास जी की कथा में ज्यादा लोग आते, इससे सन्त कबीरदास जी थोड़े उदास हुए, अप्रत्यक्ष रूप से उनमें ईर्ष्या भाव पैदा हो गए। सन्त तुलसीदास को सन्देषा भेजकर कहने लगे – जीवन में त्याग किए बिना उपदेष क्या काम का हमारी तरह सब त्याग दो।

कबीरा खड़ा बाजार में लिए लुकारी हाथ,
जो घर जाले आपनो चले हमारे साथ।

तुलसीदास जी ने बड़ी विनम्रता से उत्तर दिया –

घर तो तजना सहज है, सहज नारि को नेह।
मान, बढ़ाई, ईर्ष्या तजना कठिन एह।।

घर बार, परिवार, सम्पत्ति सब छोड़ना तो सहज है, परन्तु ईर्ष्या तजना कठिन है जो तुममे अभी भी है।

इसलिए ईर्ष्या अर्थात् राग मनुष्य की प्रगति में, सुख में बाधक है।

कमशः.....

शान्ति के समान कोई तप नही,
सन्तोष के समान कोई सुख नही,
तृष्णा से बढ़कर कोई बीमार नही,
दया से बढ़कर कोई धर्म नही।

www.thearyasamaj.org

शत्-शत् नमन्

पूज्य पिता स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी

पं. भगवानदास आर्य "आर्य ज्योति"

जीवन सफर के हर पथ का करवाया आपने दिग्दर्शन,
हर श्वांस में प्रेरणा बन बसा, आपका ही स्पंदन।।
बढ़ते रहे, चलते रहें, बताए मार्ग पर कदम।
पुण्यतिथि पर आपको करते, शत्–शत् नमन्।

29 वीं पुण्य स्मृति 16 अगस्त 2013

आपके बताए हुए राष्ट्रीय, सामाजिक, आध्यात्मिक मार्ग एवं
सेवा मार्गों को आदर्श मानते हुए सदैव प्रयत्नशील

– प्रकाश आर्य

पौत्र – रवि आर्य, ऋषि आर्य

पाटीदार स्वदेशी सेवा केन्द्र

स्टेशन रोड, रतन सेंव वोले के सामने, महू (म. प्र.)

पातंजलि के सबसे अच्छे, सबसे सस्ते उत्पाद यहां उपलब्ध है।

गाय का शुद्ध घी उपलब्ध है।

प्रोप्रायटर – **ईश्वर पाटीदार**

मो. 9669602576

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज महू के द्वारा आयोजित कार्यक्रम

प्रतिदिन यज्ञ प्रातः 6 से 7 तथा सायं 6 से 7 तथा प्रत्येक रविवार प्रातः 8.30 से 10.30 बजे सत्संग, यज्ञ, भजन, प्रवचन एवं ध्यान का आयोजन होता है। कृपया पधारें।

निःशुल्क योग, प्राणायाम कक्षा

प्रातः 6 से 7 बजे

प्रशिक्षक – इन्दरसिंहजी, पातंजलि योगपीठ द्वारा

लॉयन्स सेवालय

प्रति रविवार प्रातः १०.०० से १२.०० बजे

टीकाकरण एवं पोलियो की दवाई निःशुल्क पिलाई जाती है

डॉ. अशोक मोहन्ती द्वारा रोगियों का **परिक्षण** किया जाता है । साथ ही ऑख, नाक, गले, दॉत व शिशु रोग विशेषज्ञ डॉक्टर भी अपनी सेवाएं प्रदान कर रहे है।

षष्ठम गायत्री महायज्ञ

महू की तिथियां निश्चित

25 से 31 दिसम्बर 2013

कृपया नोट करें।

बुक-पोस्ट

श्रीमान् _____

_____

सम्पादक, प्रकाशक द्वारा मुद्रक : **प्रकाश** आर्य कृतें आर्य सेवा संघ, महू के लिये चौधरी प्रिंटर्स, महू से मुद्रित व प्रकाशित, संपादक मंडल : रामलाल शास्त्री विद्याभास्कर, सुरेश शास्त्री आर्य समाज, महू